एम. एम. पुंछी जे. के समक्ष

अम्बाला बस सिंडिकेट,-याचिकाकर्ता।

बनाम

पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय

और अन्य,-प्रतिवादी।

सिविल रिट याचिका संख्या 30131 आफ 1978

मई 1, 1984.

औद्योगिक विवाद अधिनियम (1947 का XIV)–धारा 33सी(2)–नियोक्ता अपने विरुद्ध प्राप्त शिकायतों के कारण किसी कर्मचारी को सेवा में नहीं रखना चाहता है–कर्मचारी इस बात के लिए सहमत है कि वह कम वेतन पर कोई अन्य कार्य करेगा ताकि नियंत्रण में रहे– प्रबंधन उसे वैकल्पिक नौकरी दे रहा है और उसका वेतन कम कर रहा है - कर्मचारी अपने मूल वेतन और कम वेतन के बीच अंतर का दावा कर रहा है - ऐसा दावा - क्या धारा 33 सी(2) के तहत विचारणीय है।

माना गया कि आदेश की भाषा अर्थपूर्ण है। कर्मकार को दिया गया पद एक 'वैकल्पिक कर्तव्य' था जिसे टालना ही था

कर्मचारी का जनता और अन्य कर्मचारियों से सीधा संपर्क हो और उसे नियंत्रण में रखा जाए, जिससे न तो उसकी बर्खास्तगी हो और न ही उसकी पदावनति हो। उसका वेतन सिर्फ इसलिए कम कर दिया गया क्योंकि कामगार कम वेतन के लिए सहमत हो गया, जिसके परिणामस्वरूप वेतन रोकने की कार्रवाई ने श्रम न्यायालय को औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 की धारा 33 सी (2) के तहत कामगार की याचिका पर विचार करने और फैसला सुनाने को पूरी तरह से उचित ठहराया। उसके बाद. इस प्रकार याचिका उसके समक्ष विचारणीय थी।

(पैरा 6).

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत रिट याचिका में प्रार्थना की गई है कि उनके द्वारा मांगे गए रिकॉर्ड और याचिकाकर्ता को निम्नलिखित राहत दी जा सकती है: -

(ए) 28 अप्रैल 1978 के आदेश को रद्द करने के लिए, अनुबंध 'पी-4';
(बी) उत्तरदाताओं संख्या 2 और 3 को याचिकाकर्ता के खिलाफ पुरस्कार अनुबंध 'पी-4' लागू करने से रोकना और उन्हें पुरस्कार के तहत देय राशि या किसी अन्य राहत की वसूली से रोकना, जिसका याचिकाकर्ता इस मामले की परिस्थितियों में हकदार है; और
(सी) याचिकाकर्ता को याचिका की लागत की अनुमति दी जाए।

याचिकाकर्ता की ओर से वरिष्ठ अधिवक्ता जी.आर. मजीठिया और उनके साथ अधिवक्ता श्री सलिल सागर।
प्रतिवादी की ओर से सुरजीत सिंह, वकील।

निर्णय

एम. एम. पुंछी, जे.

(1) सुरजीत सिंह, प्रतिवादी-कर्मचारी, याचिकाकर्ता के यहां कार्यरत था, जो एक परिवहन कंपनी है। ऐसा प्रतीत होता है कि उनके खिलाफ 3 मार्च, 1969 और 15 मार्च, 1969 की दो शिकायतें थीं। प्रबंधन की ओर से कर्मी को बताया गया कि शिकायतों के मद्देनजर उसे रोजगार पर बनाये रखना संभव नहीं होगा. ऐसा प्रतीत होता है कि कर्मचारी-प्रतिवादी ने शिकायतों में बताए गए तथ्यों से इनकार नहीं किया, बल्कि क्षमाप्रार्थी था। उन्होंने प्रबंधन को सुझाव दिया कि उनकी सेवाएं समाप्त न की जाएं बल्कि उन्हें कोई अन्य जिम्मेदारी दी जाए जिससे वह जनता और अन्य कर्मचारियों के साथ सीधे संपर्क से बच सकें। यहां तक कि वह कार्यालय में वेबिल चेकर के रूप में काम करने या किसी अन्य पद पर काम करने के लिए भी सहमत हो गया। इसके अलावा वह वैकल्पिक ड्यूटी के लिए अपने वेतन में कटौती कराने पर भी सहमत हुए। इसके बाद, प्रबंधन ने 24 मार्च, 1969 को आदेश, अनुलग्नक पी. 2 के माध्यम से आदेश दिया कि वह अब काम नहीं करेंगे। एक के रूप में काम करें. इंस्पेक्टर को कार्यालय में वे बिल चेकर की जिम्मेदारी दी जाए ताकि वह लगातार जांच के दायरे में रहे। यदि आवश्यक हो तो वह अड्डा प्रभारी के रूप में भी कार्य कर सकता है। तदनुसार उनका वेतन घटाकर रु. 1 अप्रैल 1969 से 250 प्रति माह।

(2) 20 अगस्त, 1977 को, प्रतिवादी-कर्मचारी ने औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33-सी (2) के तहत पटियाला में श्रम न्यायालय के समक्ष एक आवेदन दिया और सबसे पहले उसे देय राशि के निर्धारण के लिए प्रार्थना की। बीच की अवधि के लिए कम किए गए वेतन के लिए और दूसरा 1 मार्च, 1976 से 16 अगस्त, 1976 तक वेतन का भुगतान न करने के लिए। उन्होंने दावे की गणना रुपये में की। 12,247. बचाव में, याचिकाकर्ता-प्रबंधन ने दावा किया कि कामगार का कोई मौजूदा अधिकार नहीं था और इस तरह याचिका सुनवाई योग्य नहीं थी। इसके अलावा यह दलील दी गई कि कामगार की मजदूरी रुपये से कम कर दी गई है। 400 प्रति माह से रु. कदाचार के लिए उनके खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई के माध्यम से 1 अप्रैल 1969 से 250 प्रति माह की दर से जुर्माना लगाया गया और जब तक उक्त आदेश कायम था, श्रम न्यायालय के पास आवेदन पर आगे बढ़ने का अधिकार क्षेत्र था। 1 मार्च, 1976 से 16 अगस्त, 1976 की

अवधि के संबंध में, यह दावा किया गया था कि 1 मार्च, 1976 को, कर्मचारी को कंडक्टर के साथ अपनी नौकरी बदलने के लिए कहा गया था और चूंकि उसने काम करने से इनकार कर दिया था, इसलिए उसकी सेवाएं रद्द कर दी गईं। ख़त्म कर दिया गया. लेकिन बाद में डिमांड नोटिस और सुलह कार्यवाही के बाद समझौते के जरिये उसे वापस ले लिया गया। और चूंकि उस अवधि के दौरान उन्होंने गर्म काम किया था, इसलिए वे किसी भी वेतन के हकदार नहीं थे।

(3) श्रम न्यायालय ने, अवार्ड अनुलग्नक पी. 4 के माध्यम से, 1 मार्च, 1976 से 16 अगस्त, 1976 तक श्रमिक के वेतन के दावे को अस्वीकार कर दिया। लेकिन वेतन में कटौती के कारण अंतर के संबंध में, यह सकारात्मक है माना गया कि कामगार रुपये के वेतन का हकदार था। 400 प्रति माह और जो भी अंतर रह गया था (चूंकि अंतराल में भुगतान किए गए पैसे को लेकर भ्रम था), इसे प्रबंधन द्वारा गणना करने के लिए छोड़ दिया गया। पीड़ित प्रबंधन ने संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।

(4) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील का मुख्य हमला यह है कि आदेश, अनुलग्नक पी 2, प्रबंधन द्वारा 24 मार्च, 1969 को पारित किया गया था, जो उसी दिन कर्मचारी को दिया गया था, जिसे श्रमिक द्वारा लागू किया गया था। उन्होंने इंस्पेक्टर के पद के स्थान पर वे बिल चेकर का पद स्वीकार कर लिया था, ने भी स्वेच्छा से वेतन कटौती पर सहमति जताई। इसकी उपस्थिति में, यह बनाए रखा गया था कि ऐसा कोई मौजूदा अधिकार नहीं था जिसे उक्त अधिनियम की धारा 33-सी (2) के तहत लागू किया जा सके। यह सुझाव दिया गया कि उसका उचित उपाय यह था कि उस आदेश को रद्द कर दिया जाए और फिर सफल होने पर दावा किया जाए। यह भी दावा किया गया था कि आदेश, अनुलग्नक पी. 2, एक निरीक्षक के पद से कामगार को बर्खास्त करने और उसके वेतन को घटाकर रुपये पर वे बिल चेकर के रूप में फिर से नियुक्त करने के आदेश के अलावा कुछ नहीं था। इसके परिणामस्वरूप 250 प्रति माह। दूसरी ओर, कर्मचारी के विद्वान वकील ने कहा कि उक्त आदेश को निरीक्षक के पद से वे बिल चेकर के पद पर बर्खास्तगी का आदेश या यहां तक कि पदावनति का आदेश भी नहीं कहा जा सकता, बल्कि यह था कर्मचारी को वैकल्पिक ड्यूटी पर लगाने का मामला। उन्होंने आगे कहा कि वेतन में 100 रुपये की कटौती की गई है। 400 से रु. 250 प्रति माह वेतन का एक हिस्सा रोकना प्रबंधन द्वारा एक गैरकानूनी कार्य था और चूंकि कर्मचारी का पूरा वेतन प्राप्त करने का अधिकार मौजूद था, इसलिए उपरोक्त अधिनियम की धारा 33-सी (2) के तहत याचिका सुनवाई योग्य थी। हालाँकि, श्रम न्यायालय ने यह विचार किया कि आदेश, अनुलग्नक पी. 2, की व्याख्या

समाप्ति और नए रोजगार के रूप में नहीं की जा सकती है और उसके विचार में केवल रैंक और वेतन कम किया गया है

(5) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने द सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया लिमिटेड बनाम पी.एस. राजगोपालन आदि[1], मेसर्स पर भरोसा किया। पंजाब बेवरेजेज प्रा. लिमिटेड, चंडीगढ़ बनाम सुरेश चंद और अन्य, आदि[2] और न्यू सिनेमा का प्रबंधन, मेन गार्ड स्क्वायर, मदुरै बनाम पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, मदुरै और अन्य[3] ने तर्क दिया कि एक कार्यवाही के तहत धारा 33-सी (2) एक निष्पादन कार्यवाही की प्रकृति की कार्यवाही है जिसमें श्रम न्यायालय नियोक्ता से श्रमिक को देय धनराशि की गणना करता है, या यदि श्रमिक किसी लाभ का हकदार है जो गणना करने में सक्षम है धन के संदर्भ में तो यह धन के संदर्भ में लाभ की गणना करने के लिए आगे बढ़ता है। उन्होंने आगे कहा कि जिस पैसे की गणना की जानी है, या जिस लाभ की गणना की जानी है, उसका अधिकार मौजूदा होना चाहिए, जिस पर पहले ही निर्णय लिया जा चुका है, या प्रावधान किया गया है, और पाठ्यक्रम में उत्पन्न होना चाहिए और औद्योगिक कामगार और उसके नियोक्ता के बीच संबंध के संबंध में। उन्होंने कहा कि कामगार की बर्खास्तगी या पदावनति एक औद्योगिक विवाद को जन्म दे सकती है, जिसकी उचित सुनवाई की जा सकती है, लेकिन चूंकि इस मामले में यह दिखाया गया है कि कामगार को बर्खास्त कर दिया गया था और फिर से नियोजित किया गया था और वैकल्पिक रूप से पदावनत किया गया था। कामगार का वास्तविक दावा कि उसकी बर्खास्तगी या पदावनति गैरकानूनी थी और इसलिए, वह नियोक्ता का कामगार बना रहेगा और वेतन में अंतर का हकदार है, धारा 33-सी(2) के तहत नहीं किया जा सकता है।

(6) मैंने तर्क पर सावधानीपूर्वक विचार किया है, लेकिन मेरे विचार से, इसमें बहुत अधिक धारणाएँ और धारणाएँ हैं और इसलिए यह प्रबल नहीं हो सकती। आदेश की भाषा, अनुलग्नक पी. 2, अर्थपूर्ण है। कर्मचारी प्रतिवादी को दिया गया वे बिल चेकर का पद 'वैकल्पिक कर्तव्य' के रूप में था। श्रम न्यायालय के समक्ष इस मामले की पैरवी इस प्रकार से कभी नहीं की गई कि निरीक्षक के पद पर रु. का अधिक वेतन हो। 400 और वे बिल चेकर की कीमत इससे कम रु. 250 प्रति माह, या कि एक इंस्पेक्टर को वे बिल चेकर के रूप में काम करने के लिए नीचे लाना उसकी पदावनति के समान होगा। ऐसा प्रतीत होता है कि यह प्रयास केवल यह था कि कार्यकर्ता का जनता तथा अन्य कर्मचारियों से सीधा सम्पर्क न हो। इसीलिए उन्हें एक वैकल्पिक सीट दी गई, जिससे न तो उनकी बर्खास्तगी

---

[1] ए.आई.आर. 1964 एस.सी. 743.

[2] ए.आई.आर. 1978 एस.सी. 995.

[3] 1970(2) लेबर लॉ जर्नल 452।

हुई और न ही कोई पदावनति हुई। साफ़ तौर पर ऐसा प्रतीत होता है कि उसका वेतन सिर्फ इसलिए कम कर दिया गया क्योंकि काम करने वाला संभवतः दबाव में, वेतन कम करने के लिए सहमत हो गया था। इस स्थिति में, श्रम न्यायालय का यह निष्कर्ष कि श्रमिक की रैंक कम कर दी गई है, बिना किसी आधार के है क्योंकि ऐसी कोई वर्गीकृत रैंकिंग उसके सामने कभी नहीं रखी गई थी। यह एक ऐसी टिप्पणी है जिसे केवल अनायास ही नजरअंदाज कर दिया जाना चाहिए। यदि एक बार यह माना जाता है कि यह न तो बर्खास्तगी का मामला था और न ही पदावनति का, तो याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा उल्लिखित प्राधिकारी कोई फायदा नहीं उठाएंगे। अंतिम परिणाम यह हुआ कि वेतन रोकने की कार्रवाई ने श्रम न्यायालय द्वारा धारा 33-सी(2) के तहत श्रमिक की याचिका पर विचार करने और उस पर निर्णय देने को पूरी तरह से उचित ठहराया। इस प्रकार याचिका उसके समक्ष विचारणीय थी। प्रबंधन द्वारा शुरू में वेतन रुपये तय किया गया था। 400 प्रति माह और इन परिस्थितियों में इन्हें कम या रोका नहीं जा सकता। किसी भी मामले में, श्रम न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण नहीं है। यह उस तरह के प्रयास को प्रतिबिंबित करता है जो सभी घटनाओं में संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत हस्तक्षेप की आवश्यकता हो सकती है, क्योंकि मैं देखता हूं कि याचिकाकर्ता के साथ कोई स्पष्ट अन्याय नहीं हुआ है।

(7) परिणामस्वरूप, इस याचिका में कोई योग्यता नहीं है जो विफल हो जाती है और इसे खारिज कर दिया जाता है लेकिन लागत के संबंध में किसी भी आदेश के बिना।

एन.के.एस.

<u>अस्वीकरण:</u>

भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उदेश्यों के लिये निर्णय का अंग्रेज़ी सस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

सागर शर्मा
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
नूँह, हरियाणा